P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-4* December- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

स्वामी वल्लभाचार्य और शुद्धाद्वैत वेदान्त दर्शन

अशोक कुमार चौरसिया
शोध छात्र,
इतिहास एवं संस्कृति विभाग,
डा0 बी0आर0 आम्बेडकर
विश्वविद्यालय,
आगरा

सारांश

मध्यकालीन भारत के भक्ति आन्दोलन की सगुण भक्ति परम्परा में वैष्णव सम्प्रदाय के उत्थान में स्वामी वल्लभाचार्य का विशिष्ट योगदान रहा है। स्वामी वल्लभाचार्य ने अपने सम्पूर्ण जीवन में भारतवर्श की तीन आध्यात्मिक यात्रायें की तथा परम्परागत वेदान्त दर्शन को एक नई व्याख्या दी जिसे शुद्धाद्वैत वेदान्त दर्शन का नाम दिया जाता है। आदि शंकराचार्य द्वारा अद्वैत से प्रारम्भ, श्रीभृर्त प्रपंथ के अविभागाद्वैत, रामानुज के विशिष्टाद्वैत तथा निम्बार्क के दैताद्वैत से भिन्न शुद्धाद्वैत वेदान्त दर्शन कहीं अधिक वैज्ञानिक, तर्क संगत तथा व्यावहारिक है जिसमें जीव और जगत ब्रह्म से अभिन्न हैं तथा ब्रह्म का अद्वैत माया से रहित है। शुद्धाद्वैत वेदान्त दर्शन में ब्रह्म कार्य और कारण दोनों रूपों में शुद्ध है न कि माया से सम्बद्ध जैसा आदि शंकराचार्य के अद्वैत दर्शन में उल्लिखित है। स्वामी वल्लभाचार्य के अनुसार शुद्धाद्वैत वेदान्त दर्शन ही एक मात्र वैदिक है।

मुख्य शब्द : जगत, कार्य, कारण, ब्रह्म, जीव, निर्गुण, माया, सच्चिदानन्द ।

प्रस्तावना

पुष्टिमार्ग के संस्थापक एवं शुद्धाद्वैत दर्शन के प्रणेता स्वामी वल्लभाचार्य का जन्म आन्ध्रप्रदेश के काकरवाड़ नामक स्थान पर निवास करने वाले भारद्वाज गोत्रीय, कृष्ण यजुर्वेद की तैत्तिरीय शाखा का अध्ययन करने वाले वेलनाडू भट्ट ब्राह्मणों के वंश में विक्रम संवत् 1535 की बैशाख कृष्ण पक्ष की एकादशी तदनुसार 18 अप्रैल 1478 ई0 को मध्यप्रदेश के रायपुर नगर से कुछ दूर महानदी के तट पर स्थित 'चम्पारण्य' नामक स्थान पर हुआ था।

इनके पिता श्री कृष्ण के परम भक्त तैलंग ब्राह्मण श्री लक्ष्मण भट्ट थे और उनकी माता इल्लमागारू थीं। वल्लभाचार्य के जन्म की कथा भी बड़ी रोचक है। इनके जन्म के कुछ वर्ष पूर्व लक्ष्मण भट्ट सपरिवार तीर्थयात्रा करते हुए उत्तर भारत आये एवं कुछ ऐसा संयोग हुआ कि वे दक्षिण भारत छोड़कर काशी में ही बस गये। एक बार काशी में यह प्रचार हुआ कि शीघ्र ही मुसलमानों का आक्रमण होने वाला है जिससे भयभीत जनता काषी छोड़कर भागने लगी। जो दक्षिण भारतीय थे दक्षिण की ओर जाने लगे। इसी समूह में लक्ष्मण भट्ट भी अपनी पत्नी इल्लमागारू के साथ सम्मिलित हो गये। इल्लमागारू उस समय गर्भवती थीं। चलते–चलते जब यह समूह वर्तमान छत्तीसगढ़ के रायपुर जिले के 'चम्पारणी' नामक स्थान पर पहुंचा तब अत्यधिक थकी हुई इल्लमागारू आगे बढ़ने में असमर्थ हो गयी। पत्नी की दयनीय स्थिति को देखकर लक्ष्मण भट्ट अत्यन्त दुःखी हुए एवं उन्होंने इस रात चम्पारण्य में ही रूकने का निश्चय किया। रात में ही इल्लमादेवी को प्रसव पीड़ा होने लगी और उन्होंने उस निर्जन, निःस्तब्ध रात्रि में एक बालक को जन्म दिया। इसी शिशु का नाम वल्लभ रखा गया जो महाप्रभु श्रीमद्वल्लभाचार्य के नाम से प्रसिद्ध हुए। स्वामी वल्लभाचार्य के पिता अध्ययन–अध्यापन करते तथा अन्य ब्राह्मणोचित कर्म करते हुए जीविकोपार्जन किया करते थे। इसलिए बालक को भी प्रारम्भ से ही धर्म–शास्त्रों का परिचय हो गया।

स्वामी वल्लभाचार्य जी ने भारत के विभिन्न तीर्थ–स्थलों की तीन यात्राएं की, इन यात्राओं का उल्लेख पुष्टिमार्ग में 'पृथ्वी–प्रदक्षिणा' के नाम से मिलता है।[1] इन प्रदक्षिणाओं के माध्यम से आचार्य जी ने अपने शुद्धाद्वैत सिद्धान्त और पुष्टि मार्गीय भक्ति का प्रसार–प्रचार एवं व्याख्याएं प्रस्तुत की। इन तीन यात्राओं के माध्यम से वल्लभाचार्य ने सम्पूर्ण देश का भ्रमण किया और विभिन्न सम्प्रदायों के विद्वानों से दार्शनिक एवं धार्मिक विषयों पर विचार विमर्श करते हुए ज्ञान सम्पदा अर्जित की।[2] वल्लभ सम्प्रदाय में यह यात्राएं पृथ्वी परिक्रमा अथवा दिग्विजय के नाम से विख्यात है। इस यात्रा क्रम में ईश्वरीय प्रेरणा से जिस ज्ञान का स्फुरण हुआ उसे उन्होंने शुद्धाद्वैत वेदान्त और पुष्टि मार्ग का परिवर्तन कर अपनी रचनाओं के माध्यम से प्रचारित किया।

शोध पत्र का उद्देश्य

1. शोध पत्र में स्वामी वल्लभाचार्य द्वारा प्रतिपादित पूर्व में चले आ रहे आदि शंकर के अद्वैत अथवा श्रीभृर्त प्रपंथ के अविभाद्वाद्वैत अथवा रामानुज के विशिष्टाद्वैत से तुलना करना।
2. शुद्धाद्वैत दर्शन के मुख्य बिन्दुओं में जैसे ब्रह्म के स्वरूप, माया से अलिप्त, तथा जगत के कारण के रूप में ब्रह्म को स्वीकार करना सम्मिलित हैं।
3. स्वामी वल्लभाचार्य के शुद्धाद्वैत दर्शन के वैज्ञानिक तार्किक एवं व्यावहारिक पक्षों की व्याख्या करना।

साहित्यावलोकन

शोधार्थी ने इस शोध पत्र के लिए निम्नलिखित मूल एवं द्वितीयक स्रोतों का अध्ययन करके शोध पत्र को प्रामाणिक तथा तर्क संगत बनाने का प्रयास किया है।

1. श्रीमद्भगवत गीता :–गीता, प्रेस, गोरखपुर संवत, 2031. श्री कृष्ण द्वारा ब्रह्म, जीव तथा कर्म की विशिष्ट व्याख्या की गई है।
2. श्री वल्लभाचार्य :– श्रीमद् अणुभाण्यम्, तेलीवाला प्रैस, बम्बई, संवत 1992, स्वामी वल्लभाचार्य ने ब्रह्मसूत्र पर अणुभाण्य की रचना की थी। अणुभाण्य 3/2/23 तक ही स्वामी जी ने लिखा तथा बाद के अंश उनके पुत्र विट्ठलनाथ ने पूरे किये।
3. उपाध्याय बलदेव, भारतीय दर्शन, शारदा मन्दिर, वाराणसी, 1960 इस ग्रन्थ में बलदेव उपाध्याय ने भारतीय दर्शन के छः दर्शनों की व्याख्या के साथ–साथ स्वामी वल्लभाचार्य के शुद्धाद्वैत तथा पुष्टि मार्ग पर भी लेखन किया है। अद्वैत दर्शन को समझने के लिए इस ग्रन्थ का प्रमुख योगदान है।
4. गुप्ता, दीनदयाल, अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय, भाग–1–2, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, 1970 इस पुस्तक में लेखक ने वल्लभ सम्प्रदाय के विकास तथा वल्लभ सम्प्रदाय के विभिन्न ग्रन्थों पर विस्तृत व्याख्या की है। इस शोधपत्र में स्वामी जी की आध्यात्मिक यात्राओं तथा वेदान्त दर्शन पर उनके शास्त्रार्थ का विवरण भी इस ग्रन्थ से प्राप्त हुआ है।
5. निगम, लक्ष्मी शंकर एवं शोभा : श्रीमद् वल्लभाचार्य उनका शुद्धाद्वैत एवं पुष्टिमार्ग, सेन्ट्रल बुक हाउस, रामपुर, 1997, इस पुस्तक में स्वामी वल्लभाचार्य के शुद्धाद्वैत एवं पुष्टिमार्ग पर व्याख्या की गई है।
6. राधाकृष्णन, एस0 : भारतीय दर्शन, भाग 1 व 2, राजपाल एण्ड संस, दिल्ली, 1972, सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने भारतीय दर्शन की विभिन्न शाखाओं की वैज्ञानिक व्याख्या इस पुस्तक में दी गई। पुस्तक का स्तर भी उच्चकोटि का है तथा भारतीय दर्शन के क्रमानुसार विकास की जानकारी में इस पुस्तक का बहुमूल्य स्थान है।

भारतीय दर्शन उपनिषदों का दर्शन है। जो वेदान्त दर्शन के नाम से प्रसिद्ध है। कुछ विद्वानों के माध्यम से उपनिषदों की शिक्षा के मतभेद में एकरूपता लाने का प्रयास किया गया। एक रूपता लाने में सबसे अधिक प्रयास श्री वादरायणव्यास ने अपने 'ब्रह्मसूत्र' के माध्यम से किया। किन्तु इस ब्रह्मसूत्र की शिक्षा के विषय में विद्वानों ने अलग–अलग मत दिया। मतभेद होने के पश्चात् भी इनमें एक समानता यह है कि प्रायः सभी विद्वान अद्वैत मत का प्रतिपादन करते है। अद्वैत अर्थात् जहाँ अन्तिम सत्ता केवल एक की ही मानी गयी हो, उनमें मत भेद न हो उपनिषदों के अनेक वाक्य ऐसे हैं जिनके एक ही मत है जैसे–'सर्व खल्विदं ब्रह्मं',सदेव सौम्येदग्रमासीदेकमेवा द्वितीयम्' नेह नानास्ति किञ्चनः' 'तत्वमसि' 'मृत्योः स मृत्युमाप्नोति य इह नानैव पश्यति,' आदि, किन्तु ये सभी दार्शनिक जो अद्वैत मत का ही समर्थन करते हैं इनका पोशक होते हुए भी ब्रह्म का जीव और जगत से सम्बन्ध दर्शाने में पृथक–पृथक सिद्धान्त प्रतिपादित किये हैं। जैसे शंकराचार्य का अद्वैत, रामानुज का 'विशिष्टा द्वैत, निम्बार्क का द्वैताद्वैत' एवं वल्लभाचार्य का 'शुद्धाद्वैत'। इस प्रकार सभी दार्शनिक अद्वैत मत का प्रतिपादन करते हैं फिर भी सबके अद्वैत विभिन्न प्रकार के हैं।

स्वामी वल्लभाचार्य का दार्शनिक सिद्धान्त शुद्धाद्वैत के नाम से प्रसिद्ध है। आदि शंकराचार्य के अद्वैत, श्रीभर्तृप्रपंच के 'अविभागाद्वैत' एवं श्री रामानुज के' 'विशिष्टाद्वैत' से पृथक बतलाने के लिए ही इस दर्शन का नामकरण शुद्धाद्वैत हुआ है।

शुद्धाद्वैत समास का दो प्रकार से विग्रह होता है। प्रथम–षष्ठी है। द्वितीय–कर्मधारय समास मानने पर ''शुद्धयोः अद्वैतम् रूप होता है जिसका अर्थ है जीव और जगह ब्रह्म से अभिन्न है। द्वितीय–कर्मधारय समास मानने पर 'शुद्धं च तदद्वैतम्' रूप होता है, जिसका अर्थ है ब्रह्म का अद्वैत जो शुद्ध है अर्थात् माया के सम्बन्ध से रहित है।

''शुद्धाद्वैतपदे ज्ञेयः समासः कर्मधारयः।
अद्वैतं शुद्धयोः प्राहुः षष्ठीतत्पुरूषं बुधा।।''[3]

स्वामी वल्लभाचार्य ने केवलाद्वैत परम्परा में मान्य माया से लिप्त ब्रह्म को जगत् का कारण न मानकर माया संबंध रहित, माया से अलिप्त ब्रह्म को जगत का काराण स्वीकार किया है। तदनुसार ब्रह्म कार्य और कारण दोनों रूपों में शुद्ध है मायिक नहीं।

माया सम्बन्ध रहितं शुद्धमित्युच्यते बुधौ।
कार्य–कारण रूपं हि शुद्धं ब्रह्म न मायिकम्[4]

अर्थात् विद्वान लोग माया के सम्बन्ध से रहित को शुद्ध कहते हैं,कार्य कारण रूप ब्रह्म शुद्ध है, मायिक नहीं। शुद्धाद्वैत वादियों के अनुसार एकमात्र शुद्धाद्वैत ही वैदिक है तथा शुद्ध अद्वैत को जानने वालों की प्रतीत ही उत्तम है।

ब्रह्म सच्चिदानन्द स्वरूप है। वह नित्य, व्यापक, सर्वशक्तिमान, स्वतन्त्र व निर्गुण है। ब्रह्म, सजातीय, विजातीय, और स्वागत द्वैत से रहित है। वह अपनी इच्छा से अपने आनन्द को किचिंदंश में तिरोभूत करके अपने आध्यात्मिक रूवरूप से 'अक्षर ब्रह्म' के रूप में प्रकट होकर जगत् की सृष्टि करता है। पुरूषोत्तम उसका आधिदैविक और जगत् उसका आधिभौतिक रूप है। इस मत में ब्रह्म सर्वधर्म विशिष्ट होने से परस्पर विरोधी धर्मो का आश्रय, समन्वय है। उसमें विरूद्ध धर्मों की स्थिति स्वाभाविक है। माया द्वारा प्रतीयमान मात्र नहीं। विचित्रता और विविधता उसकी अद्भुत विशेषता है।

इस सिद्धान्त के दो अन्य नाम प्रसिद्ध है– 1–ब्रह्मवाद 2–अविकृत परिणामवाद। शुद्धाद्वैत दर्शन के अनुसार इसे ब्रह्मवाद इसलिए कहा जाता है कि सब कुछ 'ब्रह्म' है, जीव जगत् सब ब्रह्म है। 'सर्व ब्रहम् इति वादः ब्रह्मवादः तेन' स्वामी वल्लभाचार्य के अनुसार– इस प्रकार सब कुछ को ब्रह्म रूप समझना ही ब्रह्मवाद है, बाकी अन्य असत्य है। अविकृत परिणाम वाद से इसलिए कहा जाता है क्योंकि जगत ब्रह्म का विकार रहित परिणाम है। शुद्धाद्वैत के अनुसार–जिस प्रकार सोने का आभूषण पुनः सोने में परिणत हो जाता है, उसी प्रकार जगत पुनः तिरोभूत हो सकता है। समानुज का सिद्धान्त इसे विपरीत है। वह परिणामवाद के समर्थक हैं वहाँ जगत् को दूध से दही में परिणाम के रूप में बतलाया गया है। किन्तु वह फिर दूध के रूप में परिणत नहीं हो सकता।

वल्लभ दर्शन के अनुसार ईश्वरीय सत्ता केवल एक है दो नहीं। यह सत्ता शुद्ध है तथा माया से परे है। यह जड़ चेतन से भिन्न नहीं है अर्थात् सब कुछ ब्रह्म है। अद्वैत ब्रह्म को ही वल्लभ दर्शन में 'श्री कृष्ण' कहा गया है। किन्तु परब्रह्म की प्राप्ति के लिए एक मात्र साधन भक्ति है। परब्रह्म का प्रथम पुरुषोत्तम रूप ही अधिक महत्वपूर्ण है। यह सर्वशक्तिमान है। परब्रह्म का प्रथम पुरुषोत्तम रूप अन्य दो स्वरूपों से श्रेष्ठ है। ब्रह्म का पुरुषोत्तम रूप ही सबको धारण और सबको पोषण करता है और अविनाशी परमेश्वर तथा परमात्मा कहा जाता है। मैं क्षर से अतीत तथा अक्षर से भी उत्तम हूँ। लोक में, वेद में, मैं पुरुषोत्तम के नाम से प्रसिद्ध हूँ।

अतोऽस्मिलोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तमः।[5]

शुद्धाद्वैत दर्शन के अनुसार जीव–सृष्टि ब्रह्म की लीला है। जीव ब्रह्म एक अनेक होने की इच्छा का स्वरूप है। श्रुति के अनुसार जब ब्रह्म को अकेले अच्छा नहीं लगा तब उसने सोचा कि मैं एक हूँ अनेक को जाऊँ तब उसने स्वयं को जीव के रूप में अनेक रूप धारण किया। ''स एकाकी न रमते'' 'एकोऽहम् बहुस्यामी' तदात्मनम् स्वयम् कुरूत' स्वामी वल्लभ के अनुसार–जब भगवान को रमण करने की इच्छा होती है, तब वे अपने आनन्दादि गुणों के अंशों के तिरोहित करके अपने चिदंश से जीव रूप ग्रहण करते हैं।

निष्कर्ष

शुद्धाद्वैत दर्शन के अनुसार जीव और ब्रह्म का सम्बन्ध अंश और अंशी का है। स्वामी वल्लभ के अनुसार जिस प्रकार अग्नि और चिनगारियों में कोई भेद नहीं है, उसी प्रकार ब्रह्म और जीव में कोई भेद नहीं है। किन्तु फिर भी स्वामी वल्लभ जीव और ब्रह्म में कोई भेद नहीं है। इसे नहीं मानते उनका कहना है कि जीव केवल ब्रह्म का अंश मात्र है। जीव और ब्रह्म में अन्तर है कि जीव की शक्ति सीमित है और ब्रह्म की शक्ति असीम एवं अनन्त है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *श्रीमद्भगवत गीता :– गीता, प्रेस, गोरखपुर संवत, 2031।*
2. *श्री वल्लभाचार्य :– श्रीमद् अणुभाण्यम्, तेलीवाला प्रैस, बम्बई, संवत 1992।*
3. *उपाध्याय बलदेव, भारतीय दर्शन, शारदा मन्दिर, वाराणसी, 1960।*
4. *गुप्ता, दीनदयाल, अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय, भाग–1–2, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, 1970।*
5. *निगम, लक्ष्मी शंकर एवं शोभा : श्रीमद् वल्लभाचार्य उनका शुद्धाद्वैत एवं पुष्टिमार्ग, सेन्ट्रल बुक हाउस, रामपुर, 1997।*
6. *राधाकृष्णन, एस0 : भारतीय दर्शन, भाग 1 व 2, राजपाल एण्ड संस, दिल्ली, 1972,*
7. *मित्तल, प्रभुदयाल, अष्टदाप परिचय, मथुरा, 1961।*
8. *सिन्हा, जे0एन0, भारतीय दर्शन, लक्ष्मी नारायण प्रकाशन, आगरा, 1968।*
9. *स्नेहलता, वल्लभ वेदान्त प एक दृष्टिकोण श्री गुरू मन्दिर नई दिल्ली, 1980।*
10. *हेमराज जी, श्री अद्वैतसिद्धान्त, श्री सत्यधर्म मण्डल दिल्ली, 1962।*

पत्रिकायें

1. *कल्याण*
2. *वल्लभ विज्ञान*
3. *दार्शनिक त्रैमासिक*
4. *ब्रह्मसम्बन्ध*

पाद टिप्पणी

1. *श्रीनाथ जी के प्रागट्य की वार्ता (वैकटेश्वर प्रेस, बम्बई, 1988), पृ0 72–80*
2. *अणुभाष्य प्रकाश, श्रीपुरुषोत्तम, पृ0 13–14*
3. *श्री वल्लभाचार्य, तत्वार्थदीप निबन्ध शास्त्रार्थ प्रकरण लल्लुभाई छगनलाल देसाई, अहमदाबाद, 1926, पृ0 111–115*
4. *श्री वल्लभाचार्य, तत्वार्थदीप निबन्ध शास्त्रार्थ प्रकरण लल्लुभाई छगनलाल देसाई, अहमदाबाद, 1926, पृ0 111–115*
5. *श्रीमद्भगवतगीता, गीता प्रेस, गोरखपुर, पृ0 15–17*